International Journal of Education, Modern Management, Applied Science & Social Science (IJEMMASSS)
ISSN : 2581-9925, Impact Factor: 6.340, Volume 03, No. 04(II), October - December, 2021, pp.139-144

जयप्रकाश नारायण के राजनीतिक विचारः प्रासंगिकता

डॉ. दिनेश कुमार गहलोत*
रामदेव कड़वासरा**

प्रस्तावना

लोकनायक जयप्रकाश नारायण का जन्म 11 अक्टूबर 1902 को विजयादशमी के दिन प्रातः काल हुआ था। जयप्रकाश के पिता का नाम हरसूदयाल और माता का नाम श्रीमती फूलरानी देवी थी।[i]

लोकनायक जयप्रकाश नारायण जनता की मुक्ति के लिए वे राजनीति को जरूरी समझते है। उनका कहना था कि ''अगर आप सचमूच स्वतंत्रता, स्वाधीनता की परवाह करते है तो बिना राजनीति के कोई लोकतंत्र या उदार संस्था नही हो सकती। राजनीति के रोग का सही मारक और बेहतर इलाज राजनीति ही हो सकती है, राजनीति का विरोध नही।''[ii]

जयप्रकाश नारायण का राजनीतिक विचार था कि राज्य में प्रत्येक प्रकार की कुरीतियों, अराजकता व भ्रष्टाचार का विरोध करना चाहिए। इसमें शासन के अधिकारियों का व्यवहार व न्यायविदो के अन्याय में शामिल है। संघर्ष के साधनों में उन्होंने सत्याग्रह, कर न देना, मतदाताओं को शिक्षित करना, लोक संघर्ष समिति द्वारा अन्याय का विरोध आदि को सम्मिलित किया है। यदि शासन इन गतिविधियों में शामिल नही हो रहा है और जनता को राहत नही दे रहा है तो जनता को अपने से संबंधित मामलों का प्रबंध अपने हाथो मे ले लेना चाहिए अर्थात् जनता को स्वंय सरकार का निर्माण करना चाहिए।[iii]

जयप्रकाश नारायण ने नेहरू जी को पत्र में लिखा है कि ''आपको विश्वास होगा कि देश को आप समाजवाद की दिशा में ले जा रहे है लेकिन आपकों अच्छी नीयत के बावजूद भी देश उल्टी दिशा में जा रहा है। इतिहास एक साथ एक ही दिशा मे जा सकता है दो में नही। आप पूँजीवाद के सहयोग से समाजवाद का निर्माण करना चाहते है। आप दो घोड़ो पर एक साथ सवारी करना चाह रहे है यह सर्कस में हो सकता है, सत्ता की राजनीति में नही।[iv]

लोकतंत्र के लिए आवश्यक है कि राज्य पर जनता की निर्भरता यथासंभव कम से कम हो तथा महात्मा गाँधी और कार्ल मार्क्स दोनों के अनुसार लोकतंत्र की सर्वोच्य स्थिति वह होगी जिसमें राज्यों का लोप हो जाएगा।[v]

पूर्ण लोकतंत्र के विकास के लिए यह आवश्यक है कि लोकाभिक्रम को काम करने का यथासंभव अधिक से अधिक सुअवसर प्राप्त हो और जनता विभिन्न प्रकार के आर्थिक एवं सांस्कृतिक संगठनों एंव संस्थाओं के माध्यम से अपनी स्थिति को सुधारने और अपने काम करने की व्यवस्था करने में समर्थ और समुत्साहित हो।[vi]

जयप्रकाश का मानना था कि लोकतंत्र मे एक विरोधी दल का होना आवश्यक है और समाजवादी पार्टी इसके लिए तैयार है। उन्होंने तय कर लिया कि अब नेहरू सरकार में शामिल नही होना है बल्कि हमें किसानों और काश्तगारों के बीच रहना है। उनका विश्वास जीतना है।[vii]

1957 में ''उन्होंने समाजवाद से सर्वोदय की ओर'' नामक पुस्तक लिखी जिसमें उन्होंने अपने आध्यात्मिक विचारों को प्रकट किया था। इस पुस्तक में उन्होनें लिखा–''मुझे लगने लगा था कि सारे राजनीतिक दल जनता के मत से जनता पर शासन करने के लिए सत्ता हथियाना चाहते है। वह जनता को उन भेड़ो की तरह बना देना चाहते है। जिनके लिए संप्रभुता का अर्थ होगा अपने लिए गडरियों का चुनाव जो उनके कल्याण के लिए उसकी देख–रेख करें। मेरे लिए यह स्वतंत्रता नही थी, यह वह स्वराज्य नही था, जिनके लिए इस देश के लोगों ने लड़ाई लड़ी थी।[viii]

6 सहायक आचार्य, राजनीति विज्ञान विभाग, जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर।
** शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग, जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर।

जयप्रकाश नारायण का मानना था कि लोकमत लोकतंत्र का एक ऐसा हथियार है जिसका प्रयोग जनता सत्ताधारियों द्वारा होने वाले अधिकारों के दुरूपयोग को रोकने या अपने अधिकारों को जताने के लिए करती है। लोकमत को जताने का एक समर्थं उपाय चुनाव है। लोकमत जनता के वोट से प्रकट होता है और सत्ता वोट के द्वारा ही शांतिपूर्वक बनती है, बदलती है। ऐसे हथियार का इस्तेमाल क्यों न किया जाय जिसमे हिंसा नही है। जिसमें जनमत होता है लोकतंत्र में वही चीज सही और उचित मानी जाती है। उनका कहना था कि चुनाव लड़ना राजनीति का काम है लोकनीति का नही, और राजनीति के रास्ते पर चलना सर्वोदय का नही, राजनीतिक दलों का काम है।[ix]

जयप्रकाश ने सदा ही समाज सेवा को राजनीति से ऊपर रखा। अपने निबन्ध 'भारतीय राजव्यवस्था का पुनर्निर्माण' में उन्होंने दलीय राजनीति की कड़ी आलोचना करते हुए कहा, ''दलीय राजनीति नेतागिरी को जन्म देती है, राजनैतिक नैतिकता को दबाती है तथा विवेकहीनता, कपट आचरण एवं षड्यंत्र को बढ़ावा देती है।''[x]

जयप्रकाश नारायण का कहना कि पिछले कुछ वर्षों से मैंने देखा कि राजनीति दल–बदल राजनीतिक भ्रष्टाचार की एक जड़ है। राजनीतिक दल–बदल के कारण देश ने राजनीतिक अनीति और पतन का शर्मनाक तमाशा देखा है। विधायकों की खरीद–बिक्री का बाजार जोर–शोरो से चला है इसका मुख्य लालच मंत्री पद और पैसे रहे है। इस गंदी चाल बाजी से राजनीतिक आचार संहिता, दलीय पद्धति का औचित्य, राजनीतिक दलों की विश्वसनीयता और सबसे बड़ा नुकसान भारतीय लोकतंत्र को हुआ है जिसका हिसाब लगाना कठिन है। इसलिए इस अनिष्ट को खत्म करने के लिए तत्काल कार्यवाही की जानी चाहिए।[xi]

उनका मानना था कि गॉधीजी का स्वशासन के लिए दलविहीन रचनात्मक दृष्टिकोण मुझे एक विकल्प के रूप में दिखाई पड़ रहा है। मार्क्सवाद की राज्यविहीनता की परिकल्पना आज भी मुझे सही लगती है और गॉधीजी भी यही मानते थे कि सर्वश्रेष्ठ सरकार वही होती है। जो कम–से–कम शासन करती है।[xii]

जयप्रकाश का मानना था कि इस दिशा में मुझे सर्वोदय का मार्ग सही लगा कि आम नागरिकों को इस प्रकार संगठित किया जाए और सत्ता का विकेन्द्रीकरण हो कि बिना राज्य और सरकार के बहुत दूर तक उनका काम चल सकें।[xiii]

जयप्रकाश का मानना था कि जहां एकता की आवश्यकता है, वहां दलों द्वारा विवाद खड़े किए जाते हैं और जहां मतभेदों को न्यूनतम करना चाहिए, वहां वे उनको अतिरंजित करते हैं। ये दल अक्सर दलीय हितों को राष्ट्रीय दलों के ऊपर रखते हैं। चूंकि सत्ता का केंन्द्रीयकरण नागरिक को शासन कार्य में भाग नहीं लेने देता, इसलिए दल या राजनेताओं के लघु ग्रह ही जनता के नाम पर शासन करते हैं और लोकतंत्र व स्वशासन का भ्रम पैदा करते हैं।[xiv]

जयप्रकाश नारायण के राजनीतिक विचारों में दलविहीन लोकतंत्र का विचार प्रमुख है। जयप्रकाश नारायण के मानवेन्द्र नाथ रॉय के दल विहिन लोकतंत्र के विचारों को अपने शब्दों में व्यक्त किया है। जयप्रकाश दलगत राजनीति को जनता की असहाय स्थिति का कारण मानते थे क्योकिं दलगत राजनीति समाज में नैतिक पतन, भ्रष्टाचार एवं स्वार्थ को बढ़ावा देती है। बहुसंख्यक शक्ति दल शक्ति अपने हाथ में लेकर लोकतांत्रिक शासन के स्थान के पर स्वेच्छाचारी शासन को बढ़ावा देते है। जनता को सुशासन का झूठा आश्वासन भूलावे में डाल दिया जाता है। छोटे–छोटे कार्य के लिए जनता को शासन पर निर्भर रहना पड़ता है। राजनीतिक दल उन्हीं सावर्जनिक मुद्दों पर ध्यान केन्द्रित करते है। जिनसे उनका राजनीतिक स्वार्थ पूरा होता है। जनसामान्य की वास्तविक कठिनाइयो का निराकरण नही किया जाता। सत्ता–लोलुप राजनीतिक तत्वों द्वारा सार्वजनिक हित के नाम पर अपने व्यक्तिगत हितों की पूर्ति की जाती है। सत्तारूढ़ दल ही नही अपितु विपक्ष भी इस होड़ में पीछे नही रहता। जयप्रकाश ने दलीय राजनीति के स्थान पर विकेन्द्रीयकरण का समर्थन किया। वे जनता को शासन पर नियंत्रण करने के अधिकारी से युक्त करना चाहते थे। उनके अनुसार वर्तमान निर्वाचन पद्धति के स्थान पर जनता द्वारा स्थानीय स्तर पर जन प्रतिनिधियों का प्रत्यक्ष मनोनयन होना चाहिए। ग्राम सभाओं द्वारा मतदाता परिषदों को चुना जाय। मतदाता परिषद् उम्मीदवारों का चुनाव करें और जिससे बहुमत प्राप्त हो उससे राज्य अथवा केन्द्र की धारा सभा के लिये निर्वाचित माना जाय। चुनाव में शक्ति, धन तथा समय की बचत के लिये एक स्थान के लिये एक ही उम्मीदवार प्रस्तुत किया जाय। सर्वाधिक लोकप्रिय व्यक्ति ही निर्वाचित किया जाय। इस प्रकार जयप्रकाश ने विकेन्द्रीयकरण के माध्यम से पंचायती राज्य को केन्द्र से सम्बन्धित करने का मार्ग बतायां।[xv]

अपने हाल के अनुभवों से यह बात हमको अच्छी तरह समझ लेनी चाहिए कि सत्ता के केन्द्रित होते जाने में बहुत बड़ा खतरा है। इसीलिए हमारा ध्यान अब तक उपेक्षित रही स्थानीय स्वायत्तशासी संस्थाओं की ओर जाना चाहिए। ग्राम, प्रखण्ड और जिला–स्तर की ये स्थानीय स्वायत्तशासी संस्थाएँ ही हमारे लोकतंत्र की बुनियाद को मजबूत बना सकेंगी। सत्ता हथियाने, तानाशाही लादने की वृति के विरूद्ध ऐसी विकेन्द्रित व्यवस्था ही ढाल बन सकती है। इसलिए हमारा झुकाव सत्ता के विकेन्द्रीकरण की ओर होगा। इसके परिणामस्वरूप आम जनता के जीवन को प्रभावित करने वाले सवालों पर निर्णय लेने की प्रक्रिया में देश के दूर–दराज के गाँववालों को भी शामिल किया जा सकेगा।[xvi]

जयप्रकाश नारायण ने पूरा जीवन राष्ट्र की सेवा में समर्पित कर दिया। उन पर महान व्यक्तियों के विचारों का काफी प्रभाव था, जैसेः कार्ल मार्क्स, लेनिन, महात्मा गॉधी आदि। उनका शुरू में झुकाव मार्क्स के विचारों से प्रभावित होते हुए समाजवाद की तरफ रहा था। वे चाहते थे कि ऐसा समाज हो जिसमें शोषण ना हो, सभी के साथ समानता का व्यवहार किया जाये। किसी के साथ अन्याय न होने पाये। उनका विश्वास समाजवाद में धीरे–धीरे कम होता गया और गांधी के सर्वोदय के प्रति अधिक हो गया।[xvii]

जयप्रकाश नारायण का कहना था कि मैं सर्वोदय और समाजवाद, दल और सत्ता से बँधी हुई राजनीति तथा दल और सत्ता से मुक्त राजनीति या राजनीति और जिसे विनोबा केवल 'लोकनीति' कहते है कि समस्या की तह तक पहुँच गया। मैंने दल और सत्ता की राजनीति से अलग होने का निश्चय इसलिए नही किया कि मैं इसे ऊब गया या निराश हो गया था, बल्कि इसलिए अलग हुआ कि मुझे स्पष्ट हो गया तथा कि राजनीति से काम नही बनेगा।[xviii] फिर, ये समझ लेना जरूरी है कि राजनीति की विकृति ने मुझे विचलित नही किया, बल्कि सर्वोदय की नयी राजनीति ने मुझे आकर्षित किया हैं। सर्वोदय की राजनीति एक अलग प्रकार की राजनीति है मै इसे 'जनता की राजनीति' कहता हूँ, जो सत्ता और दल की राजनीति से हमेशा अलग है।[xix]

जयप्रकाश नारायण के विचार भी समय के साथ–साथ बदलते रहे थें परन्तु उनका ऐसा प्रयास रहा कि समाज में शोषण, भुखमरी, गरीबी, भ्रष्टाचार तथा अन्याय का अन्त हो और समानता, बन्धुत्व कायम हो। उसके लिए वे हमेशा अहिंसा पर जोर देते हुए देश की राजनीतिक परिस्थितियां को बदलने का प्रयास करते रहे। उनके राजनीतिक विचारों में सत्य, सहनशीलता, तटस्थता तथा तर्क शक्ति की विद्यमानता रहती थी।[xx]

जयप्रकाश नारायण ने भारत की राज्य व्यवस्था के पुनर्निर्माण के लिये अपने विचार प्रस्तुत किये। वे वैज्ञानिक तथा विवेकपूर्ण व्यवस्था के लिये लोकतंत्र को पुनर्गठित कर उसे सामुदायिक समाज एवं विकेन्द्रीयकरण पर आधारित करना चाहते थे। उन्होंने इस संदर्भ में दो तर्क प्रस्तुत किये। प्रथम, पश्चिम का लोकतन्त्र निर्वाचित अल्पतन्त्र है और लोकतन्त्र के स्थान पर उसे लोकतान्त्रिक अल्पतन्त्र कहा जाता है। इसमें जन सामान्य का सहकार नगण्य होता है। द्वितीय, पाश्चात्य लोकतन्त्र व्यक्तिवादी समाज पर आधारित है। आधुनिक पाश्चात्य लोकतन्त्र व्यक्ति की सामाजिक प्रवृति एवं सच्चे मानवीय समाज को नकारता है। ऐसे लोकतन्त्र में समाज एक अनागरिक पृथक व्यक्तियों का समूह है। राजनीति केवल मत प्राप्त करने का यन्त्र मात्र रह गई है। ऐसे में व्यक्ति आंगिक एकता का प्रतीक न होकर एक पृथक इकाई के रूप में दिखाई देता है। सामाजिक सम्बन्धों का उस पर कोई प्रभाव नही। वह सामुदायिक जीवन के स्थान पर व्यक्तिगत जीवन जीता है। इस प्रकार पश्चिमी लोकतन्त्र की प्रक्रियाऐं तथा संस्थायें दोषपूर्ण है। जयप्रकाश ने लोकतन्त्र को इन बुराइयों बचाने के लिये प्राचीन भारतीय समाज के क्षेत्रीय एवं व्यवसायात्मक समुदायों का आदर्श अपनाने पर जोर दिया है। जयप्रकाश ने सुझाया है कि लोकतन्त्र के विकेन्द्रीयकरण को कठोर नीति से लागू किया जाय। समाज को इस प्रकार से पुर्नगठित किया जाय कि सामाजिक समन्वय एवं व्यक्तियों का सहकार भली प्रकार प्राप्त हो सकें । ऐसा समाज जिसमें विभिन्नता में एकता, हितों की समरूपता, सामाजिक उत्तरदायित्वों के मध्य स्वतन्त्रता, प्रकार्यों का वैभिन्य किन्तु लक्ष्य की समानता और सामाजिक हित प्राप्त किया जा सके। जाति, वर्ग, नस्ल, धर्म तथा राजनीति सभी व्यक्ति को विभिन्न संघर्षमय समूहों में बॉट लेते है। समाज ही उन्हें एक जुट रखता हैं और उनके हितों को समन्वित करता है। मनुष्य सामुदायिक कार्यो में सहभागी होकर आत्म–नियंत्रण एवं आत्म–निदेशन प्राप्त करता हैं।[xxi]

जयप्रकाश नारायण पंचायतीराज को सहभागी लोकतंत्र का आधार बनाने के लिए कुछ शर्ते बतायी है पहली आवश्यक शर्त यह है कि जनता को राजनैतिक शिक्षण प्रदान किया जाय, दूसरी शर्त यह है कि संगठित राजनीतिक दल पंचायतीराज के मामलों व संगठनों के साथ हस्तक्षेप नही करें, तीसरी शर्त यह है कि सत्ता का विकेन्द्रीकरण होना चाहिए, चौथी शर्त यह है कि प्रत्येक स्तरों पर साधनों का नियंत्रण स्थानीय सत्ता के हाथ में होना चाहिए।[xxii]

स्वराज्य के बाद हर चुनाव जनता की दृष्टि से एवं लोकतंत्र की दृष्टि से उत्तरोत्तर अप्रस्तुत हो रहा है। पैसा, असत्य, भ्रष्टाचार एवं शारीरिक बल प्रयोग के कारण चुनाव का अर्थ एवं आशय ही समाप्त होता जा रहा है। चुनाव में खर्च बेतहाशा बढ़ रहा है।[xxiii]

अपने देश में जो लोकतंत्र है उसमें देश की जनता को एक–मात्र अधिकार इतना ही है कि जब–जब चुनाव आये, जनता अपना मतदान करे। हमारा–आपका नागरिक की हैसियत से इसके अलावा और कोई स्थान नहीं है। वह अधिकार भी हमारा छिन रहा है इसलिए कि न तो चुनाव स्वतंत्र है और न ईमानदारी से होते है, न फेयर हैं, न फ्री हैं।[xxiv]

सर्वप्रथम तो हमारा चुनाव–कानून ही अपूर्ण और भ्रष्टाचार की संभावनाओं से भरा हुआ है, इसमें बदलाव की बात वर्षों से कही जा रही है, पर केन्द्र में सत्तारूढ़ पार्टी ने कभी भी इस प्रश्न पर कुछ करने की आवश्यकता नहीं समझी।[xxv]

आज जो लोकतंत्र है और जिस तरह वह चल रहा है (उसे देखते हुए) यह कहना पड़ता है कि यह सिर्फ लोकतंत्र का ढाँचा है। इसके अन्दर न जान है, न खून है, न मांस है, हड्डी ही हड्डी है। एक संविधान है, कानून है, बस इतना ही है।[xxvi]

दल–विहीन लोकतंत्र तो मार्क्सवाद तथा लेनिनवाद के मूल उद्देश्यों मे से एक है, यद्यपि वह उद्देश्य दूर का है। मार्क्सवाद के अनुसार समाज जैसे–जैसे साम्यवाद की ओर बढ़ता जाएगा, वैसे–वैसे राज्य का क्षय होता जायेगा–और अन्त में 'स्टेटलेस सोसाइटी' कायम होगी। वह समाज अवश्य ही लोकतांत्रिक होगा, बल्कि उसी समाज में लोकतंत्र सच्चा स्वरूप प्रकट होगा और वह लोकतंत्र निश्चय ही दल–विहीन होगा। जब स्टेटलेस सोसाइटी–शासन मुक्त–बन जाता है तो वह शायद ही दल युक्त होगा।[xxvii]

वर्तमान कानून और चुनाव–प्रणाली अत्यन्त ही दोषपूर्ण है और जितनी ही जल्द चुनाव के कानून में, रीति–नीति में परिवर्तन होंगे, उतना ही हमारे लोकतन्त्र और देश के लिए श्रेयस्कर होगां परन्तु दुर्भाग्य यह है कि दिल्ली के सत्ताधारी इस प्रकार के सुधार निकट भविष्य में नही करने वाले हैं। जब तक कि देशव्यापी जनमत का दबाव उन पर नहीं पड़ता, तब तक वे ऐसा कुछ नहीं करेंगे।[xxviii]

जयप्रकाश नारायण का मानना था कि चुनाव आदि की राजनीति के पीछे जितनी शक्ति खर्च होती है उससे आदि शक्ति ही इस नये मार्ग को खोजने के पीछे खर्च की जाय तो वातावरण कुछ अलग ही बनेगा। आज की मौजूदा शासन व्यवस्था और उसके दोषों के संबंध में हमें गंभीरता से सोचना चाहिए तथा हमें उन दोषों को दूर करने के उपाय सोचने चाहिए। दलबंदी के झगड़े, दलों की अंदरूनी अनुशासनहीनता, सैद्धान्तिक ध्रुवीकरण के बदले स्वार्थ की खिचतानी, अवसरवादी गठबंधन, दलों, प्रतिनिधियों और प्रधानों का स्वेच्छाचार, सिद्धान्त को किनारे रखकर व्यक्तिगत या निहित स्वार्थ के लिए होने वाले दल–बदल, पैसा का बेहिसाब खर्च, घुसखोरी, ये सब तो आसानी से हमारी नजरों के सामने आता रहता है किन्तु इसके बावजूद भी हमें अधिक गहराई में जाना चाहिए।[xxix]

भ्रष्टाचार के बारें में जयप्रकाश नारायण का कहना है कि व्यापार में, उद्योग में और हर जगह भ्रष्टाचार अवश्य है। लेकिन इसे तब तक दूर नहीं किया जा सकता जब तक राजनीति में और शासन में एवं सत्ता में व्याप्त भ्रष्टाचार पर काबू न पाया जाए। वहां से तो भ्रष्टाचार को जड़ से ही खत्म ही करना होगा। अन्य क्षेत्रो के भ्रष्टाचारियों को सत्ता के द्वारा और राजनीति के द्वारा पोषण मिलता है।[xxx]

मूलभूत स्वतंत्रता को अक्षुण्ण रखा जाय। लोक प्रतिनिधियों के बीच प्राधिकार का हस्तातंरण कर ग्राम स्तर, प्रखंड स्तर और जिला स्तर पर सत्ता का विकेंन्द्रीकरण किया जाय। लोक प्रतिनिधियों की वापसी के अधिकार को जनाधिकार के रूप में स्वीकार किया जाये और इसकी प्रक्रिया निर्धारित करनी होगी, चुनाव सुधार करने की आवश्यकता होगी और समुदायवादी व्यवस्था लानी होगी। प्रशासन को जनसामान्य के लिए सुगम बनाने के लिए व्यापक पैमाने पर मूलभूत परिवर्तन करने की अपेक्षा होगी। ऐसा प्रशासन को जनसामान्य के प्रति जिम्मेवार बनाकर ही ऐसा किया जा सकता है। इसके लिए हर गाँव और मुहल्ला में जनसमितियां गठित की जाए।[xxxi]

निष्कर्ष

जयप्रकाश नारायण के राजनीतिक विचारों की वर्तमान में प्रासंगिकता इसलिए है क्योंकि उन्होंने दल–विहिन लोकतंत्र की स्थापना पर बल दिया। वह सही अर्थों में जनता का शासन लाकर समाज में बदलाव लाना चाहते थे। वे भारतीय राजनीति में बढ़ रहे राष्ट्रीय, राज्य और क्षेत्रीय दलों की संख्या में कमी लाना चाहते

थे। सत्ता प्राप्त करने के लिए राजनीतिक दलों द्वारा चुनाव के समय असत्य बोलकर लोगों को गुमराह करना, भ्रष्टाचार, धनबल, अनैतिकता, बाहुबल आदि तरीकों की आलोचना की। वें दोषपूर्ण दलीय पद्धति को दूर करना चाहते थे। उन्होंने चुनावों में दल–बदल को एक प्रमुख समस्या माना जो वर्तमान भारतीय राजनीति में भी व्याप्त है। उन्होंने राजनीति में नेताओं द्वारा किये जाने वाले दल–बदल की भी आलोचना की और दल–बदल पर अंकुश लगाने पर बल दिया । जयप्रकाश नारायण ने राजनीति पर कहा कि जिस प्रकार की राजनीति आज हो रही है, उससे देश और समाज में अशान्ति उत्पन्न हो रही है इस प्रकार की राजनीति से अन्याय व दुःख फैलता है, गरीबी और शोषण को बढ़ावा मिलता है। वे लोकतंत्र का आधार ग्राम स्वराज्य को मानते थे। लोकतंत्र को सफल बनाने के लिए जयप्रकाश नारायण के निर्वाचन संबंधी दोषों को दूर करने संबंधी विचार व शिक्षा संबंधी विचार महत्वपूर्ण है। वे भारतीय राजनीति में व्याप्त भ्रष्टाचार व दलगत राजनीति को दूर करने के पक्ष में थे। उन्होंने राजनैतिक परिस्थितियों को बदलने के लिए अहिंसा पर जोर दिया। जयप्रकाश नारायण जनक्रांति के द्वारा भारत में समाजवाद की स्थापना करना चाहते थे। जयप्रकाश नारायण ने सत्तात्मक राजनीति का विरोध किया। वें लोकतांत्रिक समाजवाद के पक्षधर थे। वे भारतीय राजनीति में दोषपूर्ण चयन प्रणाली को बदलने के पक्ष में थे। उनका मानना था कि सत्ता प्राप्त करने के लिए राजनीतिक दल अपवित्र व अनैतिक साधनों का प्रयोग करते है इस पर प्रतिबंध लगाना चाहिए। इस प्रकार जयप्रकाश नारायण ने भारतीय राजनीति पर कड़ा प्रहार करते हुए उसमें निहित दोषों को स्पष्ट करते हुए व्यापक सुधारों की आवश्यकता पर बल दिया।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

i राजस्वी एम. आई., जयप्रकाश नारायण संपूर्ण क्रान्ति का शंखनाद, मनोज पब्लिकेशन्, दिल्ली, 2008, पृष्ठ सं. 1

ii मेहरोत्रा ममता, जयप्रकाश तुम लौट आओ, प्रभात प्रकाशन, 2019, पृष्ठ सं. 7

iii नारायण जयप्रकाश, टोटल रिवोल्यूशन (सम्पादक) सच्चिदानन्द, सर्व सेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी, 1975 पृष्ठ सं. 73

iv राजस्वी एम. आई., जयप्रकाश नारायण संपूर्ण क्रान्ति का शंखनाद, मनोज पब्लिकेशन्, दिल्ली, 2008, पृष्ठ सं. 95

v वही, पृष्ठ सं. 96

vi वही, पृष्ठ सं. 96

vii वही, पृष्ठ सं. 96

viii वही, पृष्ठ सं. 101

ix राममूर्ति आचार्य, जे.पी. की विरासत, सर्व सेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी, 2015, पृष्ठ सं. 69

x किशोर पंकज, लोकनायक जयप्रकाश नारायण, प्रभात प्रकाशन दिल्ली, 2009, पृष्ठ सं. 61

xi नारायण जयप्रकाश, मेरी विचार यात्रा भाग–2, सर्व सेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी 2012, पृष्ठ सं. 75

xii राजस्वी एम. आई., जयप्रकाश नारायण संपूर्ण क्रान्ति का शंखनाद, मनोज पब्लिकेशन्, दिल्ली, 2008, पृष्ठ सं. 102

xiii वही, पृष्ठ सं. 102

xiv वही, पृष्ठ सं. 103

xv नागर, डॉ. पुरूशोतम, आधुनिक भारतीय सामाजिक एवं राजनीतिक चिंतन, राजस्थान ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 1980 पृष्ठ सं. 564

xvi नारायण जयप्रकाश, सम्पूर्ण क्रान्ति, सर्व सेवा संघ प्रकाशन, राजघाट, वाराणसी, 2015, पृष्ठ सं. 40

xvii नारायण जयप्रकाश, समाजवाद से सर्वोदय की ओर, सर्व सेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी 2002, पृष्ठ सं. 30

xviii नारायण जयप्रकाश, समाजवाद से सर्वोदय की ओर, सर्व सेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी 2013, पृष्ठ सं. 38

xix नारायण जयप्रकाश, मेरी विचार यात्रा भाग–1, सर्व सेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी 2016, पृष्ठ सं. 31

xx नारायण जयप्रकाश, समाजवाद, सर्वोदय और लोकतंत्र, बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, पटना, 1973, पृष्ठ सं. 171

xxi नागर, डॉ. पुरूशोतम, आधुनिक भारतीय सामाजिक एवं राजनीतिक चिंतन, राजस्थान ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 1980, पृष्ठ सं. 565
xxii नारायण जयप्रकाश, सामुदायिक समाज रूप और चिंतन, सर्व सेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी 2017, पृष्ठ सं. 50–52
xxiii नारायण जयप्रकाश, सम्पूर्ण क्रान्ति, सर्व सेवा संघ प्रकाशन, राजघाट, वाराणसी, 1975, पृष्ठ सं. 38
xxiv वही, पृष्ठ सं. 38
xxv वही, पृष्ठ सं. 38
xxvi वही, पृष्ठ सं. 39
xxvii वही, पृष्ठ सं. 43
xxviii वही, पृष्ठ सं. 43
xxix नारायण जयप्रकाश, मेरी विचार यात्रा भाग–1, सर्व सेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी 2016, पृष्ठ सं. 78
xxx नारायण जयप्रकाश, सम्पूर्ण क्रान्ति, सर्व सेवा संघ प्रकाशन, राजघाट, वाराणसी, 1975, पृष्ठ सं. 8–9
xxxi सिन्हा बद्री नारायण, जयप्रकाश आन्दोलन ''एक झलक'', श्री गणपत प्रकाशन, पटना, 2009, पृष्ठ सं. 72

❖◆❖